# इकाई 25 उत्तर भारत में राज्य, प्रशासन और अर्थव्यवस्था

## इकाई की रूपरेखा



## 25.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम उत्तरी भारत के राज्यों की राज्य व्यवस्था, प्रशासन और अर्थव्यवस्था पर विचार-विमर्श करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- क्षेत्रीय राज्यों की चरित्रगत विशेषताओं का उल्लेख कर सकेंगे,
- उत्तराधिकार के मुद्दे पर प्रकाश डाल सकेंगे,
- राजाओं द्वारा अपनी प्रभुसत्ता को वैध बनाने की चेष्टाओं को रेखांकित कर सकेंगे,
- प्रशासनिक तंत्र के बारे में बता सकेंगे, और
- राजनीतिक व्यवस्था में राजस्व और अर्थव्यवस्था के निर्धारण में सामंतों और भूमिधर कुलीनतंत्र की भूमिका का उल्लेख कर सकेंगे।

## 25.1 प्रस्तावना

इस इकाई में उत्तर भारत का मतलब विंध्य पर्वत शृंखला के उत्तर में स्थित समस्त प्रदेश से है, उत्तर में कश्मीर, उत्तर-पश्चिम में राजपूताना, सिंध, मुल्तान और गुजरात; मध्य में मालवा और जौनपुर; पूर्व में उड़ीसा, बंगाल, असम के कमाटा और अहोम क्षेत्र इसके अंतर्गत शामिल किए गए हैं। दिल्ली और इसके आसपास के इलाके भी उत्तर भारत में ही पड़ते हैं, परन्तु इस इकाई में हम उनका ज़िक्र नहीं कर रहे हैं क्योंकि यहाँ हमारा उद्देश्य क्षेत्रीय राज्यों पर विचार-विमर्श करना है जबकि यह क्षेत्र दिल्ली सल्तनत में आता था। इस इकाई में क्षेत्रीय राज्यों की चरित्रगत विशेषताओं, उनके प्रशासनिक ढांचे और क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्था में सामंत वर्ग की भूमिका का विश्लेषण करने का प्रयास भी किया जाएगा।

## 25.2 उत्तर भारत में क्षेत्रीय राज्यों की चरित्रगत विशेषताएं

आम तौर पर यह धारणा बनी हुई है कि सल्तनत काल में हिंदुओं और मुसलमानों के बीच जो बैर-भाव था, वह 13वीं-15वीं शताब्दी के दौरान और बढ़ा और उनके आपसी झगड़ों तथा

संघर्षों में वृद्धि हुई। पर श्वाज़बर्ग ने इस बात का खंडन करते हुए सही कहा है कि इस काल में हिंदू और मुसलमान शासकों के बीच संघर्ष की अपेक्षा मुसलमान और मुसलमान राजाओं तथा हिंदू और हिंदू राजाओं के बीच प्रायः अधिक गहरे संघर्ष हुए। उदाहरण के लिए, मालवा और जौनपुर के मुसलमान शासक गुजरात के परम्परागत दुश्मन थे; कमाटा और अहोम के राजाओं के बीच आए दिन युद्ध हुआ करते थे; उड़ीसा के शासकों को हमेशा विजयनगर के शासकों का आक्रमण सहना पड़ा और राजपूताना के विभिन्न राजवंश आपस में लड़ा करते थे। उन्होंने अपार संकट की स्थिति में भी एकता की भावना प्रदर्शित नहीं की। वस्तुतः राजनीतिक संधियों में धर्म की अपेक्षा समय और परिस्थिति की अधिक भूमिका रही। 1450-51 में महमूद शाह गुजराती के खिलाफ मालवा के महमूद खलजी प्रथम ने चम्पानेर के राजा गंगा दास की सहायता की थी। बाद में, मेवाड़ के राणा कुंभा की शक्ति को देखते हुए महमूद खलजी ने राणा के खिलाफ गुजराती शासक कुतबुद्दीन की सहायता की।

13वीं-15वीं शताब्दी की राजनीतिक व्यवस्था का एक खास गुण यह था कि इस काल की राजनीतिक व्यवस्था का फैलाव "उर्ध्व" था, न कि "क्षैतिज"। अर्थात् इन क्षेत्रीय राज्यों का भू-क्षेत्र सल्तनत के मुकाबले काफी कम था, पर यहाँ राजनीतिक व्यवस्था ग्रामीण इलाकों तक गहराई से जमी हुई थी। (अधिक जानकारी के लिए इकाई 23 और 24 देखिए)।

क्षेत्रीय शासकों के अधीनस्थ भू-क्षेत्र के अधिकांश हिस्सों में उनकी पकड़ कमजोर थी; जहाँ उनका लगभग पूर्ण नियंत्रण होता था, वहाँ भी उन्हें प्रायः कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। नियंत्रण के आधार पर उनके अधिकार क्षेत्र को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है :

i) जिस क्षेत्र से भू-राजस्व सीधे राजस्व पदाधिकारियों द्वारा वसूल किया जाता था, वहाँ राज्य का प्रभाव और नियंत्रण सबसे ज्यादा होता था।

ii) जिन इलाकों का राजस्व स्थानीय सरदार वसूल करते थे, वहाँ भी राज्य का नियंत्रण पर्याप्त होता था।

iii) जिन क्षेत्रों से केवल नज़राना आता था, वहाँ राज्य का नियंत्रण सबसे कम था। इस व्यवस्था का सीधा प्रभाव क्षेत्रीय शासकों और सामंतों, करदाता सरदार या राजा और स्थानीय कुलीन वर्ग (तथाकथित **ज़मींदार, मुकद्दम** आदि) के बीच के संबंधों पर पड़ा। विभिन्न क्षेत्रीय राज्यों के शासक वर्ग की प्रकृति पर विचार-विमर्श करते वक्त हम इस मुद्दे पर विस्तार से बातचीत करेंगे।

## 25.3 उत्तराधिकारी राज्यों के रूप में उत्तर भारतीय राज्य

क्षेत्रीय राज्यों को आम तौर पर सल्तनत के उत्तराधिकारी राज्य के रूप में देखा जाता है। इसके पक्ष में एक तर्क दिया जाता है कि क्षेत्रीय राज्यों के संस्थापक किसी न किसी रूप में सल्तनत के मातहत कर्मचारी रह चुके थे; चाहे उन्होंने गवर्नर के रूप में सल्तनत की सेवा की हो या किसी अन्य पद पर कार्य किया हो। अगली इकाईयों को पढ़ते वक्त आप महसूस करेंगे कि कुछ मामलों में यह बात सही है, पर सभी जगह यह बात लागू नहीं होती। मसलन, गुजरात, मालवा और जौनपुर के संस्थापक क्रमशः ज़फर खां, दिलावर खां और मलिक सरवर तुगलक सल्तनत में गवर्नर के रूप में कार्य कर चुके थे। इसके अतिरिक्त, बंगाल के शासक का सल्तनत से सीधा और निरंतर संबंध बना रहा।

लेकिन, राजपूत राज्य इस दृष्टि से अपवाद थे। उन्हें हमेशा सल्तनत का आक्रमण झेलना पड़ा पर उन्होंने कभी भी उसका पूर्ण आधिपत्य स्वीकार नहीं किया। उन्हें जब भी मौका मिला उन्होंने सल्तनत के जुए को उतार फेंका और अपने वंशीय राज्य की स्थापना की। सिंध के मामले में भी बिल्कुल ऐसा ही हुआ। सल्तनत के दबाव में आकर सिंध के शासकों ने इल्तुतमिश, मौहम्मद तुगलक और फिरोज़ तुगलक का प्रभुत्व स्वीकार कर लिया, परन्तु व्यावहारिक तौर पर सुमिराहों और सम्माहों ने स्वतंत्र रूप में शासन किया। असम (कमाटा और अहोम), कश्मीर और उड़ीसा राज्यों का उदय सल्तनत से बिल्कुल स्वतंत्र रूप में हुआ। (अधिक विवरण के लिए इकाई 23 और 24 देखिए)।

कुछ क्षेत्रीय शक्तियों का उदय सल्तनत के खंडहर पर हुआ था, अतः यह माना जाने लगा कि इसकी राजनीतिक संरचना भी सल्तनत के ही ढांचे पर निर्मित थी। आइए, देखें इस कथन में कितनी सच्चाई है।

## 25.4 उत्तराधिकार का प्रश्न

इकाई 16 में आप सल्तनत की सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्था का अध्ययन कर चुके हैं। आपने पढ़ा होगा कि इस्लाम में उत्तराधिकार संबंधी कोई निश्चित नियम नहीं है। परिणामस्वरूप, इसके लिए चुनाव, मनोनयन और वंशानुगत राज्यारोहण तीनों प्रक्रियाएं साथ-साथ चलती रहीं। वस्तुतः जिसके पास शक्ति होती थी, वह गद्दी का हकदार बन जाता था। अतः इस मामले में उलट-फेर करने की पूरी गुंजाइश थी।

सल्तनत के समान क्षेत्रीय हिंदू या मुस्लिम राज्यों में भी उत्तराधिकार का कोई निश्चित नियम नहीं था। अतः षड्यंत्र और गुप्त संधियों का बड़ा जोर रहता था और इसमें कभी-कभी महिलाएं भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती थीं। मालवा में ज्येष्ठाधिकार की अपेक्षा मनोनयन का सिद्धांत प्रभावी हुआ। जौनपुर में "शक्ति" का बोलबाला रहा। 1458 में हुसैन शाह शर्की ने अपने बड़े भाई मौहम्मद शाह शर्की को मारकर गद्दी हासिल कर ली। इसी प्रकार, गुजरात में अपने राज्यारोहण के पूर्व अहमद शाह को अपने चाचा मौदूद सुल्तान (फिरोज़ खां) की चुनौती का सामना करना पड़ा था। बंगाल में इस मामले में सरदारों की भूमिका प्रमुख रही और शासकों को राज्याधिकार प्राप्त करवाने में वे सक्रिय रहे। शमसुद्दीन अहमद शाह की हत्या उसके गुलामों शादी खां और नासिर खां (1435) द्वारा कर दी गई। इसके जवाब में विरोधियों ने उनकी हत्या कर दी (1442)। 1487 तक अबीसीनियाई (हब्शी) सरदारों की शक्ति अपने शिखर पर पहुंच गई। इस समय अबीसीनियाई सरदार मलिक अंदिल ने जलालुद्दीन फतह शाह को मारकर गद्दी हथिया ली।

राजपूताना में भी ज्येष्ठाधिकार का शत-प्रतिशत पालन नहीं किया जाता था। इस संदर्भ में गुहिलों और सिसोदियों के मामले को लिया जा सकता है। राणा लाखा की मृत्यु के बाद चुंडा (राणा का ज्येष्ठ पुत्र) को गद्दी प्राप्त नहीं हुई, बल्कि उसके अल्पवयस्क पुत्र राणा मोकल को शासक बनाया गया। इसी प्रकार, उदय ने अपने पिता राणा कुंभा को मारकर गद्दी हासिल की। रायमल भी आसानी से राजा न बन सका। उसे उदा के पुत्रों सहसमल और सूरजमल की चुनौतियों का सामना करना पड़ा।

कश्मीर में भी उत्तराधिकार का कोई निश्चित नियम न बनाया जा सका। 1323 में अपने मालिक की मृत्यु के बाद शाह मीर ने गद्दी हथिया ली। उसके ज्येष्ठ पुत्र जमशेद के राज्यारोहण (1342) के लिए भी लंबा उत्तराधिकार युद्ध चला। ज़ैन-उल आबेदीन ने खुद 1420 में अपने बड़े भाई अली शाह को मारकर सत्ता हासिल की।

अहोम राजाओं की नियुक्ति में प्रभावशाली सामंतों की परिषद—**बर गोहैन** और **बुराह गोहैन** की प्रमुख भूमिका होती थी। वस्तुतः इन परिषदों की अनुशंसा के बगैर कोई राजा गद्दी पर बैठने की सोच नहीं सकता था। केवल उड़ीसा राज्य में गंगा शासकों के शासनकाल में उत्तराधिकार के नियम का सम्मान किया गया। पर, कालांतर में, जब सत्ता का हस्तांतरण गजपति शासकों के हाथों में हुआ, तब इस नीति की अवमानना हुई। कपिलेंद्र की मृत्यु के बाद उसके छोटे लड़के पुरुषोत्तम ने अपने बड़े भाई हमीर के अधिकार पर कब्जा जमा लिया।

## 25.5 वैधता का मामला

राजा सर्वोच्च शक्ति था और वह सभी मामलों में अंतिम निर्णायक था। पर, जैसा कि आप पढ़ चुके हैं, इस्लाम में सुल्तान की सत्ता को कोई वैधता प्राप्त नहीं थी और खलीफा मुसलमानों का राजनीतिक प्रधान होता था। दिल्ली के सुल्तान अपनी सत्ता को "वैध" बनाने के लिए खलीफा के नाम का **खुतबा** पढ़ा करते थे और सिक्के में उसका नाम खुदवाया करते थे। क्षेत्रीय राज्यों के लिए भी अपने आपको वैध करार करना जरूरी था। यह केवल जनता पर हक जमाने के लिए ही जरूरी नहीं था, बल्कि प्रतिद्वंद्वियों को शांत करने के लिए भी यह जरूरी था। कोई भी राज्यारोहण बिना संघर्ष या युद्ध के सम्पन्न नहीं होता था, अतः विजयी उत्तराधिकारी को अपनी वैधता साबित करनी होती थी। कुछ क्षेत्रीय राज्य इतनी दूर स्थित थे, जिनके लिए बगदाद से खलीफा की मंजूरी मंगाना मुश्किल और अव्यावहारिक था। इस स्थिति में यह कार्य **उलेमा** और सूफी सम्पन्न किया करते थे।

कट्टर मुसलमानों को अपने पक्ष में करने के लिए मालवा, गुजरात, बंगाल और जौनपुर के शासकों ने हमेशा **उलेमा** और सूफियों का समर्थन प्राप्त करने की कोशिश की और इसके बदले में उन्हें अच्छे पद और राजस्व मुक्त भू-अनुदान (**मदद-ए माश**) प्रदान किए गये। वे अक्सर मुस्लिम संतों की **खानकाहों** में "मत्था टेकने" जाया करते थे। इवाज़ खलजी, मुगीसुद्दीन, रुक्नुद्दीन कैकॉस, शमसुद्दीन फिरोज़ आदि बंगाल के शासकों ने खलीफा से वैधता की मंजूरी हासिल की और सभी ने अब्बासिद खलीफा का नाम सिक्के पर खुदवाया। इब्राहिम शर्की के संरक्षण में अनेक प्रमुख मुस्लिम संतों मखदूम असदउद्दीन आफताब-ए हिंद, मखदूम सद्रउद्दीन चिराग-ए हिंद, पांडुआ के सैय्यद अलाउल हक आदि ने ख्याति पाई। मालवा शासक होशंग शाह ने **उलेमा** और अन्य विद्वानों को मालवा में बसाने के हर प्रयत्न को प्रोत्साहित किया। होशंग शाह के मन में मखदूम काज़ी बुरहानुद्दीन के प्रति अपार श्रद्धा थी और वह उसका शिष्य (**मुरीद**) भी बन गया था। महमूद खलजी ने मिस्र के अब्बासिद खलीफा से "**खिल्लत**" प्राप्त किया था। इससे मालवा के शासक की प्रतिष्ठा बढ़ी। गुजराती शासक महमूद बेगड़ा, बुरहानुद्दीन के **मुरीद** प्रसिद्ध सूफी सैय्यद उस्मान का बड़ा सम्मान किया करता था। 1459 में उसकी मृत्यु के तुरंत बाद महमूद बेगड़ा ने अहमदाबाद में उसकी याद में एक मस्जिद और **रौज़ा** (गुम्बद) बनवाया। बुरहानुद्दीन के पुत्र शाह आलम को भी गुजराती शासकों कुतबुद्दीन और महमूद बेगड़ा से सम्मान और संरक्षण प्राप्त हुआ। कश्मीर के राजा भी सूफियों का सम्मान किया करते थे। राजपूताना में, राजाओं ने अपने राजनीतिक कार्यों को वैध करार देने के लिए ब्राह्मणों को अपने पक्ष में मिलाकर रखा और इसके बदले में ब्राह्मणों को मुक्तहस्त से राजस्व मुक्त भू-अनुदान दिए। इकाई 9 में आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि 8-12वीं शताब्दी के दौरान यह प्रथा आम प्रचलन में थी। यही प्रवृत्ति 13-15वीं शताब्दी में भी बरकरार रही।

उड़ीसा में भगवान जगन्नाथ को वास्तविक राजा माना जाता था। इस कारण से ब्राह्मणों का राजनीतिक प्रभाव तेजी से बढ़ा। उन्होंने कपिलेंद्र द्वारा गंगा शासक को हटाए जाने को वैध घोषित किया (1435) और हमीर की जगह पुरुषोत्तम को गद्दी दिए जाने का समर्थन किया।

**बोध प्रश्न 1**

1) क्षेत्रीय राज्यों द्वारा "क्षैतिज" और "ऊर्ध्व" फैलाव से आप क्या समझते हैं?

.................................................................................................

.................................................................................................

.................................................................................................

.................................................................................................

.................................................................................................

2) क्या क्षेत्रीय राज्यों को सही अर्थों में सल्तनत का उत्तराधिकारी कह सकते हैं? टिप्पणी कीजिए।

.................................................................................................

.................................................................................................

.................................................................................................

.................................................................................................

.................................................................................................

## 25.6 प्रशासनिक ढांचा

अधिकांश क्षेत्रीय राज्यों का उदय दिल्ली सल्तनत के पतन के परिणामस्वरूप हुआ और इन क्षेत्रीय राज्यों ने दिल्ली सल्तनत के प्रशासनिक प्रारूप की नकल की। हालांकि कश्मीर का उदय स्वतंत्र रूप में हुआ, परंतु वहाँ भी मोटे तौर पर सल्तनत के प्रशासनिक ढांचे के आधार पर काम किया जाता था। राजस्थान और उड़ीसा में शब्दावली में कुछ परिवर्तन किए गए। अहोम राज्य का चरित्र मूलतः कबीलाई था, अतः यहाँ का प्रशासनिक ढांचा बिल्कुल भिन्न था।

मालवा, गुजरात, बंगाल, जौनपुर और कश्मीर में केन्द्रीय प्रशासन में **वज़ीर** सर्वोच्च अधिकारी होता था। उसके बाद **आरिज-ए मुमालिक, शेख-उल इस्लाम** और **काज़ी** का स्थान आता था। इसके अतिरिक्त **हाजिब, दबीर** (पत्र-व्यवहार विभाग), **अमीर-ए दर** (त्योहारों का अधिकारी), **अमीर-ए आखुर** (राजकीय घुड़साल का सरदार; कश्मीर में इसे **महाश्वशाला** के नाम से जाना जाता था) आदि अधिकारी थे। राजकीय परिवार (**हरम**) की देखभाल के लिए एक अलग प्रशासनिक तंत्र था। राज्यों को कई प्रांतों में विभाजित किया गया था। बंगाल में प्रांत **इक्लीम, अर्स** और **दियार** के नाम से जाने जाते थे। प्रांतीय गवर्नरों को **सर-ए लश्कर व वज़ीर** (सैन्य और वित्तीय अधिकारों से युक्त) कहा जाता था। कश्मीर और अन्य प्रांतों में इन्हें **हाकिम** के नाम से जाना जाता था। कश्मीर में इन **हाकिमों** की नियुक्ति अक्सर राजकीय परिवार से की जाती थी।

प्रांत **शिक** (बंगाल में) और **परगना** में विभक्त होते थे और गांव प्रशासन की सबसे छोटी इकाई होता था। केंद्र की तरह प्रांत में भी **काज़ी** न्याय पक्ष संभालते थे। **मुहतसिब** नैतिकता के लिए जिम्मेदार थे, **कोतवाल** का काम शहर में कानून-व्यवस्था की देखभाल करना था। **शिकदार** समूचे प्रांत की देखभाल करता था। गांवों में एक मुखिया (**मुकद्दम**) और लेखाकार (**पटवारी**) होते थे।

शासक एक स्थायी सेना रखते थे, पर इसके अतिरिक्त वे अपनी सैन्य शक्ति के लिए काफी हद तक प्रांतीय गवर्नरों और सरदारों पर आश्रित रहते थे। सेना में पैदल और घुड़सवार मुख्य लड़ाकू दल होते थे। इसके अलावा, हाथी भी सेना में मुख्य भूमिका निभाता था। मालवा और जौनपुर के शासक नियमित रूप से हाथी प्राप्त करने के लिए हमेशा प्रयत्नशील रहे। बंगाल और गुजरात में नौसेना भी सेना का एक महत्वपूर्ण अंग था।

उड़ीसा में प्रमुख केन्द्रीय अधिकारी थे : **राजगुरु** (राजकीय पुजारी), **महाप्रधानी** (प्रधानमंत्री), **महासंधिविग्रही** (युद्ध और शांति का सचिव), **महासेनापति** (सेना का प्रधान अधिकारी), **मूलभंडारामुना मुद्राहस्त** (राजकीय कोष का प्रधान अधिकारी), **महादंडपति** (मुख्य पुलिस अधिकारी), **महामंडलिक** (प्रांत का प्रधान), और **महापात्र** आदि। राज्य **महामंडलों** में, **महामंडल मंडलों** में और **मंडल नाडु** या **विषय** या **भोग** में विभक्त थे। प्रशासन की सबसे छोटी इकाई **गांव** था। इन क्षेत्रों के अधिकारियों को क्रमशः **महारानक, रानक, विषयपति** और **ग्रामिक** कहते थे। **ग्रामिकों** की सहायता के लिए **कर्ण** (लेखाकार), **पुरोहित, दंडपति** (पुलिस कर्मी), **उरिकावलि** (गांव का चौकीदार) और **ग्रामभट** (गांव का सेवक) होते थे। शहर के सर्वोच्च अधिकारी को **पुरवारी** कहते थे। उसकी सहायता के लिए **दंडनायक** (मैजिस्ट्रेट) और **दंडपति** (पुलिस निरीक्षक) होते थे। राजधानी के मामलों को संभालने के लिए अधिकारियों का एक अलग दल होता था। इन्हें **कलिंगनगरअध्यक्ष** कहते थे।

उड़ीसा में सैन्य संगठन के अंतर्गत राज्य के सभी नागरिकों (सभी जातियाँ और समुदाय) को आपात स्थिति में सेना में भर्ती होने को कहा जा सकता था। ऐसा प्रतीत होता है कि केवल ब्राह्मण सैन्य सेवा से मुक्त थे। पर कहीं-कहीं अपवाद भी मिलते हैं। **चाटेश्वर** अभिलेख में अनंगभीम III (1211-38) के ब्राह्मण मंत्री विष्णु का उल्लेख है, जिसने कलचुरियों के खिलाफ सेना का नेतृत्व किया था। अधिकांश सैनिक खेतिहर थे, जो आम दिनों में खेती का काम करते थे।

अहोम की राजनीतिक व्यवस्था का आधार कबीलाई था और वह अर्द्ध-सामंती प्रवृत्ति का था। राजा कबीलाई सरदार हुआ करता था। वह दो सदस्यी परिषद (**पात्र-मंत्री**) की सहायता से राज्य चलाता था। दोनों एक-दूसरे पर अंकुश लगाए रखते थे। पार्षद राजा का चुनाव करते थे और राजा पार्षदों को मनोनीत करता था। आम तौर पर गैर-सैनिक नियुक्तियां वंशानुगत आधार पर होती थीं, पर इसके साथ-साथ ज्ञान और सम्मान से युक्त दूसरे व्यक्ति भी नियुक्त किए जा सकते थे। प्रत्येक परिवार के वयस्क पुरुष सदस्य को राजा (राज्य) को समय-समय पर अपनी सेवा प्रदान करनी पड़ती थी। लेकिन, इसके बावजूद राजा के लिए अपनी जनता का शोषण करना बहुत कठिन था।

अहोम शासकों ने एक अनूठा सैनिक संगठन कायम किया था। इसे **पाइक** के नाम से जाना जाता था। 15 से 60 आयु वर्ग के सभी पुरुषों को "**गोत**" (इकाईयों) के रूप में संगठित किया जाता था। प्रत्येक "**गोत**" में चार वयस्क पुरुष होते थे। प्रत्येक "**गोत**" का एक सदस्य बारी-बारी से अपनी सेवा प्रस्तुत करता था। उन्हें कम से कम एक मानव-वर्ष के बराबर सेवा करनी होती थी। यहाँ एक बात का उल्लेख कर देना उपयोगी होगा कि उनकी

सेवाएं केवल सेना के लिए ही सुरक्षित नहीं थीं। उदाहरण के लिए, उन्हें धान की खेती और उस पर आधारित अर्थव्यवस्था को बनाए रखने का काम भी करना पड़ता था। इसके अतिरिक्त, वे जंगलों तथा दलदली भूमि को खेती योग्य बनाने में भी सहायता करते थे।

## 25.7 राजस्व प्रशासन

राज्य की आय का प्रमुख स्रोत भू-राजस्व था। कश्मीर, मालवा, गुजरात, जौनपुर और बंगाल में भू-राजस्व को **खराज** के नाम से जाना जाता था। इन क्षेत्रीय राज्यों में राज्य कर का प्रतिशत क्या था, इसके बारे में निश्चित जानकारी उपलब्ध नहीं है। किसी आकस्मिक घटना की स्थिति में कर में छूट दी जाती थी। ज़ैन-उल आबेदीन के शासनकाल में राज्य में अकाल पड़ने पर राजस्व को घटाकर 1/4 और कहीं-कहीं 1/7 कर दिया गया था। राजस्व का निर्धारण मिट्टी की उर्वरता के आधार पर किया जाता था। कश्मीर में कर वसूली वस्तु के रूप में होती थी; अनाज को पहले राजकीय भंडारों में जमा किया जाता था और फिर उसे एक निश्चित दर पर बेचा जाता था। इससे अनाज की कीमत घटाने में काफी मदद मिली। इसके अतिरिक्त, अभाव के समय में भी इस भंडार से मांग की पूर्ति की जा सकती थी।

इब्न बतूता (14वीं शताब्दी) के अनुसार बंगाल में भू-राजस्व कुल उपज का आधा होता था। पर इसी समय का एक चीनी यात्री वांग-ते युआन लिखता है कि राज्य का हिस्सा कुल उपज का 1/5 वां भाग था। बंगाल में, आम तौर पर, उपज के आधार पर ही करारोपण होता था, जमीन को मापने पर जोर नहीं दिया जाता था। किसान प्रत्येक वर्ष आठ किस्तों में लगान सीधा राज्य को देता था। बंगाल में **मजमुआदारों** (राजस्व को ठेके पर लेने वाले) का एक वर्ग था, जो किसानों से कर वसूल कर एक नियत राशि राज्य को दे देते थे। करदाता सरदार राज्य को एक मुश्त में राशि का भुगतान कर देते थे। भू-राजस्व वसूलने के लिए उनके पास अपना दल था। सभी धार्मिक क्षेत्र भू-राजस्व और अन्य प्रत्येक प्रकार के कर से मुक्त थे।

उड़ीसा में भू-राजस्व उपज का छठवां हिस्सा था। सम्पूर्ण राज्य **बीसी** और **खंड** नामक प्रखंडों में विभक्त था। प्रत्येक प्रभाग **बीसी** और **खंडाधिपति** के अधीन था। उनकी सहायता के लिए **खंडायत** और **बोइमुल** (बाद में इसे लेखाकार का पद दे दिया गया) रखे जाते थे। इन अधिकारियों के अलावा, उच्च सैनिक अधिकारियों की नियुक्ति भी की जाती थी। इनमें **महानायक, भूपति** और **भूयान** आदि प्रमुख थे। ये वंशानुगत सरदार होते थे। नागरिक और धार्मिक क्षेत्र की देखभाल के लिए भी अधिकारी नियुक्त किए गए थे, जैसे **पुरोहित, राजगुरु** आदि। इन्हें वेतन के रूप में राजस्व मुक्त भूमि मिलती थी। उड़ीसा और गुजरात में एक रोचक बात यह थी कि यहाँ धार्मिक अनुदान वंशानुगत होते थे; उन्हें **भूमिछिद्रपिधान्याय** के नाम से जाना जाता था। अनुदान प्राप्तकर्ता को गांव के साथ वहाँ के शिल्पकार, मजदूर आदि भी प्राप्त हो जाते थे। इस प्रकार, यहाँ कारीगर और किसान अर्द्ध-गुलाम बन गए। आम तौर पर पुरोहित वर्ग को ही राजस्व मुक्त भूमि मिला करती थी; उन पर आवश्यकता पड़ने पर केवल एक कर (**तनकी**) लगाया जाता था। उड़ीसा में राज्य भूमि का मालिक होता था। भूमि कर के अलावा अन्य करों का भी प्रावधान था।

अहोम राज्य में भूमि का स्वामी राज्य/कुल होता था। ज़मीन को कई टुकड़ों [illegible] विभक्त कर दिया जाता था (परिवार के आकार के अनुपात में) और उसे प्रत्येक सदस्य (पाइक) के बीच बांट दिया जाता था। यह ज़मीन उनके द्वारा राज्य को दी जाने वाली स[illegible]ों के बदले में दी जाती थी। उनकी मृत्यु के बाद भूमि का पुनर्वितरण होता था।

**बोध प्रश्न 2**

1) क्या आप सोचते हैं कि विभिन्न क्षेत्रीय राज्यों का प्रशासनिक ढांचा दिल्ली सल्तनत से मिलता-जुलता था? 60 शब्दों में उत्तर दीजिए।

.....................................................................................................

.....................................................................................................

.....................................................................................................

.....................................................................................................

.....................................................................................................

2) अहोम सैन्य संगठन पर पाँच पंक्तियां लिखिए।

........................................................................................................

........................................................................................................

........................................................................................................

........................................................................................................

........................................................................................................

3) निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए।

**मजमुआदार**

........................................................................................................

........................................................................................................

**खराज**

........................................................................................................

........................................................................................................

**बीसी**

........................................................................................................

........................................................................................................

## 25.8 सामंत और भूमिधर कुलीन वर्ग

13-15वीं शताब्दी की क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्था में सामंतों की अहम भूमिका रही है। इस सामंत वर्ग में हिंदू और मुसलमान दोनों शामिल थे। वे **खान-ए आजम, खान-ए मुअज्ज़म, महापत्राधिपत्र** आदि जैसी पदवियों से अपने को विभूषित करते थे। इन सामंतों को उनके वेतन के बदले में "**इक्ता**" (वेतन के बदले राजस्व का एक हिस्सा) दिया जाता था; इसके बदले में वे उस इलाके की कानून व्यवस्था संभालते थे, राजस्व वसूल करते थे और समय आने पर राजा को सैनिक भी मुहैया करवाते थे। सैद्धांतिक तौर पर यह पद वंशानुगत नहीं होता था और यह पद राजा अपनी इच्छा के अनुसार किसी भी सरदार को दे सकता था; पर धीरे-धीरे यह पद वंशानुगत होता गया। केवल राजपूताना इसका अपवाद था, जहाँ यह पद ज्यादातर कुल के सदस्यों को ही दिया जाता था। कभी-कभी राजा की कृपा से कुल के बाहर के व्यक्ति भी इस पद को सुशोभित कर सकते थे। आप पहले देख चुके हैं कि इन सामंतों में विद्रोह की प्रवृत्ति थी और उत्तराधिकार के युद्ध में ये किसी एक दल के साथ हो जाया करते थे। उनके पास सैन्य शक्ति थी, अतः राजा को उनपर आश्रित रहना पड़ता था। कुछ सरदार इतने शक्तिशाली होते थे कि वे उत्तराधिकारियों को गद्दी दिलाने में प्रमुख भूमिका निभाते थे और राजा उनके हाथों का खिलौना बन जाते थे।

### भूमिधर कुलीन वर्ग

आप खंड 6 में सल्तनत शासनकाल में राजस्व वसूली और कानून और व्यवस्था बनाए रखने में भूमिधर कुलीन वर्ग की भूमिका के बारे में पढ़ चुके हैं। क्षेत्रीय राज्यों में भी ऐसे वर्ग सक्रिय थे। भौगोलिक और राजनीतिक आधार पर उन्हें दो कोटियों में विभक्त किया जा सकता है :

i) सीमांत क्षेत्र में रहने वाला भूमिधर कुलीन वर्ग। इस कोटि में "सरदार" और "राजा" आते हैं : तथाकथित बिचौलिये **ज़मींदार**।
ii) मुख्य भू-क्षेत्र में रहने वाला भूमिधर वर्ग : तथाकथित प्राथमिक **ज़मींदार**।

पहली कोटि में दुराग्रही और हठी तत्वों का बोलबाला था। वे कभी किसी एक राजा का पक्ष लेते थे, तो कभी किसी दूसरे राजा का; वे अपनी निष्ठा बदलते रहते थे।

मुख्य भू-क्षेत्र में रहने वाले भूमिधर कुलीन वर्ग पर दबाव अपेक्षाकृत अधिक रहता था और उनकी गतिविधियों पर कड़ी निगरानी भी रखी जाती थी। क्षेत्रीय राज्यों की एक चरित्रगत विशेषता यह है कि यहाँ के अधिकांश शासक अप्रवासी थे; उनका कोई स्थानीय आधार नहीं था। उनका प्रमुख उद्देश्य एक ऐसे निष्ठावान ग्रामीण कुलीन वर्ग का निर्माण करना था

जिसकी सहायता से पुराने कुलीन वर्ग की शक्ति को संतुलित किया जा सके। क्षेत्रीय शक्तियों का यही प्रमुख उद्देश्य होता था और इसी में उनकी सफलता निहित होती थी। मुसलमानों के आक्रमण और राजपूत रजवाड़ों के आपसी युद्ध के कारण राजपूत काफी संख्या में मालवा और गुजरात की ओर स्थानांतरित हो गए। तेरहवीं शताब्दी तक हम देखते हैं कि इस क्षेत्र के अधिकतर भूपति राजपूत थे। अतः इस प्रक्रिया में मालवा और गुजरात के राजाओं को कड़े विरोध का सामना करना पड़ा। गुजरात में सुल्तान अहमद शाह प्रथम ने **वंठा** व्यवस्था लागू कर इस क्षेत्र में मूलभूत परिवर्तन किए।

बंगाल में, बख्तियार खलजी ने विजय के पश्चात् सारी ज़मीन अपने सेनापतियों में वितरित कर दी और उन्हें "**मुक्ती**" बना दिया। ग्रामीण इलाकों में मुसलमानों के प्रभाव को असरदार बनाने के लिए सूफियों और **उलेमा** को गांवों में बसाने के प्रयत्न किए गए और **मदद-ए माश** के रूप में भूमि अनुदान दिए गए।

## 25.9 अर्थव्यवस्था

क्षेत्रीय राज्यों की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि था। बंगाल, असम, कश्मीर और उड़ीसा प्रधानतः धान उत्पादन के क्षेत्र थे, जबकि राजपूताना, मालवा, गुजरात और जौनपुर में गेहूं प्रमुख फसल थी, मालवा की भूमि काफी उर्वर थी, जिसमें अच्छे किस्म का धान, गेहूं, चना, मटर, दाल, कपास, अच्छे किस्म के **पान** के पत्ते, आम आदि उपजाए जाते थे। ये खाद्य-सामग्रियां दिल्ली सल्तनत को भेजी जाती थीं।

कश्मीर, बंगाल, असम, गुजरात और उड़ीसा की मध्यकालीन अर्थव्यवस्था में व्यापार की महत्वपूर्ण भूमिका थी। कश्मीरी व्यापारियों का व्यापार-संबंध पटना, बनारस, ल्हासा, काठमांडु और पीकिंग तक फैला हुआ था। कश्मीर और पंजाब के बीच पीर पंजाल पहाड़ी क्षेत्र के रास्ते व्यापार होता था। कश्मीर जोजिला दर्रे के रास्ते लेह से भी जुड़ा हुआ था। यहाँ पंजाब से नमक और लद्दाख तथा यारकंद से शॉल आयात किया जाता था। कश्मीर शॉल, कस्तूरी, स्फटिक, रेशम, केसर और मेवे निर्यात करता था। जैन-उल आबेदीन ने कश्मीर में रेशम उद्योग को बढ़ावा देने का विशेष प्रयत्न किया और इस क्रम में बेहतर तकनीक और डिजाइन को प्रोत्साहन दिया। रेशम के कीड़े शहतूत के पेड़ पर पाले जाते थे। जैन-उल आबेदीन ने कश्मीर में कागज उद्योग की भी शुरुआत की। बंगाल में व्यापार भूमि और जल दोनों मार्गों से होता था, पर जल मार्ग अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण था। दो प्रमुख समुद्री रास्ते प्रयोग में लाए जाते थे : दक्षिण-पूर्वी मार्ग जो भारत को ईस्ट-इंडीज़ और चीन से जोड़ता था और दक्षिण-पश्चिमी मार्ग जो उड़ीसा, कोरोमंडल और मालाबार को अरब और अबीसीनिया से जोड़ता था। निर्यातक वस्तुओं में कपड़े, चावल, गेहूं, रेशम, चीनी आदि का प्रमुख स्थान था। इब्न बतूता हवाला देता है कि 14वीं शताब्दी के दौरान बंगाल में हिजड़ों और दासों का व्यापार भी प्रचलित था। सेन शासकों के अधीन व्यापार में गिरावट आई। मिन्हाज सिराज इस बात का ज़िक्र करता है कि 13वीं शताब्दी में बंगाल में कौड़ियों का अधिक प्रचलन था धातु के बने सिक्के गायब थे। सल्तनत शासन की स्थापना के बाद सतगांव, सोनारगांव और चटगांव जैसे महत्वपूर्ण बंदरगाह अस्तित्व में आए। इसके अतिरिक्त लखनौती, सोनारगांव, फतेहाबाद, मुहम्मदाबाद आदि शहर अस्तित्व में आए, जहाँ सिक्कों की ढलाई होती थी। इस प्रकार, मुस्लिम शासन के दौरान बंगाल में शहरीकरण की प्रक्रिया शुरू हुई। पूर्वी समुद्र पर अरब और फारस के व्यापारियों का बोलबाला था और बंगाली व्यापारी ज्यादातर बिचौलिए का काम करते थे। गुजरात में अच्छे समुद्र तट थे और वहाँ से लाल समुद्र और फारस की खाड़ी के रास्ते अरब और फारस के देशों से व्यापार होता था। खंभात, पाटन, सोमनाथ और भड़ौच सर्वाधिक महत्वपूर्ण बंदरगाह थे। समकालीन लेखन में गुजरात तट पर 84 बंदरगाहों का उल्लेख हुआ है। बारबोसा ने भी गुजरात के 12 महत्वपूर्ण बंदरगाहों का उल्लेख किया है। वारथेमा 1506 ई. में गुजरात गया था, उसके अनुसार विभिन्न देशों से हर साल 300 जहाज बंगाल आते थे और फारस, तुर्की, सीरिया और बारबेरी देशों को रेशम और कपड़ा निर्यात किया जाता था। गुजरात में व्यापारिक गतिविधियों में हिंदू और मुसलमान दोनों शामिल थे। गुजरात की अर्थव्यवस्था का मुख्य स्रोत व्यापार से आने वाला राजस्व था। अहोम अर्थव्यवस्था में वस्तु-विनिमय का प्रचलन था। यहाँ तक कि प्रशासकों को भी वेतन के रूप में भूमि और खेती करने वाले (**पाइक**) दिए जाते थे। गांव आत्मनिर्भर थे, पर नमक जैसी खाद्य वस्तु के लिए उन्हें दूसरे क्षेत्रों पर निर्भर रहना

पड़ता था। चावल प्रमुख फसल थी। ताय-अहोमों ने रोपाई द्वारा धान की खेती की नई तकनीक विकसित की थी, जो उनके आसपास के क्षेत्रों से अधिक विकसित तकनीक थी।

**बोध प्रश्न 3**

1) क्षेत्रीय राज्यों के शासकीय वर्ग के स्वरूप और ढांचे पर एक टिप्पणी लिखिए।

..........................................................................

..........................................................................

..........................................................................

..........................................................................

..........................................................................

2) 13-15वीं शताब्दी में उत्तर भारत में प्रमुख व्यापार-मार्गों का उल्लेख कीजिए।

..........................................................................

..........................................................................

..........................................................................

..........................................................................

..........................................................................

## 25.10 सारांश

इस इकाई में हमने उत्तर भारत के क्षेत्रीय राज्यों की चरित्रगत विशेषताओं का अध्ययन किया। उनका प्रभाव 'उर्ध्व' रूप में ग्रामीण क्षेत्रों में भी गहराई से समाया हुआ था, पर 'क्षैतिज' रूप में उनका प्रसार कम था अत: उनके राज्य-क्षेत्र का फैलाव सल्तनत की अपेक्षा कम था। क्षेत्रीय राज्य सल्तनत के "उत्तराधिकारी राज्यों" का प्रतिनिधित्व करते हैं। पर यह सर्वथा सत्य नहीं है। प्रशासनिक ढांचे में इन राज्यों ने सल्तनत के प्रशासनिक ढांचे को भी अपनाया और अपनी जरूरत और सहूलियत के मुताबिक उसमें परिवर्तन भी किया। स्थानीय विभिन्नताओं औरं स्थानीय संस्कृति का प्रभाव स्पष्टत: परिलक्षित होता है। जैसा कि आम तौर पर दिखाने की कोशिश की जाती है, अर्थव्यवस्था और संस्कृति के क्षेत्र में क्षेत्रीय राज्य बिल्कुल शून्य नहीं है। इन राज्यों की सांस्कृतिक गतिविधियों पर हम खंड 8 में विचार-विमर्श करेंगे।

## 25.11 शब्दावली

**अर्स** : प्रांत

**बर गोहैन तथा बुराह गोहैन** : मूलत: यह नाम उन दो बड़े अधिकारियों के हैं, जिन्हें सूकाफा ने नियुक्त किया था। ये अधिकारी राजा के बाद सर्वशक्तिमान थे। क्रमश: यह पद वंशानुगत होता गया और इनके नाम पर परिषद् गठित हो गई।

**दियार** : **अर्स** की भांति

**गोत** : चार वयस्क पुरुषों की इकाई

**हाकिम** : प्रांतीय गवर्नर

**इक्लीम** : **अर्स** की भांति

**पाइक** : अहोम सैनिक/घर परिवार के सदस्य

**पात्र मंत्री** : बर और बुराह गोहैन की परिषद्

**रौज़ा** : मकबरा

**तनकी** : आवश्यकता पड़ने पर कर के रूप में पुरोहितों से ली जाने वाली नाममात्र की रकम

## 25.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

**बोध प्रश्न 1**

1) भाग 25.2 देखिए।
2) भाग 25.3 देखिए।

**बोध प्रश्न 2**

1) भाग 25.6 देखिए।
2) भाग 25.6 देखिए।
3) भाग 25.7 देखिए।

**बोध प्रश्न 3**

1) भाग 25.8 देखिए।
2) भाग 25.9 देखिए।